(ग) काव्यलक्षण—

भामह के काव्यालङ्कार से लेकर पण्डितराज जगन्नाथ के रसगङ्गाधर तक के समग्र साहित्यशास्त्र के उपलब्ध लक्षण ग्रन्थों के अन्दर किये गये काव्य लक्षण पर विचार करने से इस बात की प्रतीति होती है कि साहित्यशास्त्र के आचार्यों ने काव्य का लक्षण शब्द को आधार मानकर, शब्दार्थ को आधार मानकर तथा रस और ध्वनि को आधार मानकर–इसप्रकार तीन प्रकार से किया है। सम्प्रति यहाँ पर भी विभिन्न आचार्यों द्वारा किये गये काव्यलक्षणों पर इसी क्रम से विचार किया जायेगा।

(१) शब्द को आधार मानकर काव्य की परिभाषा करने वाले आचार्यों के मत इसप्रकार हैं—

(१) **दण्डी** ने अपने काव्य की परिभाषा शब्द को आधार मानकर की है। शब्द के महत्त्व के विषय में आचार्य दण्डी कहते हैं—

इदमन्धन्तमः कृत्स्नं जायेत भुवनत्रयम्।
यदि शब्दाह्वयं ज्योतिरासंसारान्न दीप्यते ॥ काव्यादर्श १.४.

इन्होंने काव्य का लक्षण इसप्रकार किया है—"**शरीरं तावदिष्टार्थव्यवच्छिन्ना पदावली**" इति। अर्थात् इष्ट अर्थ को व्यक्त करने वाली पदावली तो शरीरमात्र है। यह लक्षण सामान्य होते हुये भी महत्वपूर्ण है क्योंकि इन्होंने रूपकाव्य की सत्ता मानकर काव्य का मौलिक आधार शब्द को माना है।

कान्तिचन्द्र ने काव्यदीपिका में शब्द को काव्य-लक्षण का आधार माना है।

(२) जयदेव ने अपने चन्द्रालोक में काव्य का लक्षण इसप्रकार किया है—

निर्दोषा लक्षणवती सरीतिर्गुणभूषणा।
सालङ्काररसानेकवृत्तिर्वाक्काव्यनामभाक् ॥ चन्द्रालोक १.७.

अर्थात् पद, पदांश, वाक्य, वाक्यार्थ, रसगतादि काव्य के दोषों से शून्य (निर्दोषा), अक्षरसंहत्यादि लक्षणों से युक्त (लक्षणावती), पाञ्चाली, लाटी, गौड़ी और वैदर्भी नामक काव्य की रीतियों से भूषित (सरीतिः), श्लेष, प्रसाद आदि गुणों से सुशोभित (सगुणा), शब्दार्थगत अनुप्रासोपमादि अलङ्कारों से चमत्कृत (सालङ्कार), शृङ्गारादि रसों से युक्त नाटकोपयुक्त कैशिक्यादि चार वृत्तियों, मधुरादि पञ्च वृत्तियों तथा अभिधादि तीन शब्दवृत्तियों से सम्बन्ध वाक् = वाणी को **काव्य** कहते हैं। इसप्रकार "**निर्दोषाद्युक्तधर्मविशिष्टं काव्यत्वमिति काव्यलक्षणं सम्पन्नम्**"—अर्थात् निर्दोषादि उक्त धर्मों से विशिष्ट काव्य '**काव्य**' कहलाता है। इसका यह भी अभिप्राय हुआ कि शब्दनिष्ठ काव्य होता है ।

(३) रसगङ्गाधर के कर्ता पण्डितराज जगन्नाथ ने "**रमणीयार्थप्रतिपादकः शब्दः काव्यम्**" से रमणीय अर्थ का प्रतिपादन करने वाले शब्द को काव्य माना है। लोकोत्तर आह्लाद को उत्पन्न करने वाले ज्ञान की अनुभूति का नाम "**रमणीयता**" ("**लोकोत्तराह्लादजनकज्ञानगोचरता**")। उन्होंने अन्यत्र रमणीयता को इसप्रकार स्पष्ट किया है—

"**आह्लादापरपर्यायलोकोत्तरचमत्कारःशालित्वमेवार्थनिष्ठं रमणीयत्वम्** ।"

अर्थात् आह्लाद का दूसरा नाम रमणीय है तथा यह लोकोत्तर चमत्कारी भी है। "**तुम्हारे घर पुत्र उत्पन्न हुआ है**", "**तुमको धन दूँगा**"—इस वाक्यार्थ से उत्पन्न होने वाला आनन्द लोकोत्तर नहीं कहलायेगा, अतः इस वाक्य के अन्दर "**काव्यत्व**" की प्रसक्ति नहीं होगी ।

इस लक्षण में कटाक्षादि के निवारण के लिये "**शब्द**" कहा है, व्यञ्जनावृत्ति निष्पाद्य व्यंग्यार्थ का ग्रहण करने के लिये "**वाचक**" न कहकर "**प्रतिपादकः**" कहा है, रमणीय शब्द के प्रतिपादक व्याकरणादि के विषय में लक्षण अतिव्याप्त न हो जाये अतः "**अर्थ**" कहा है तथा "**घटमानय**" इत्यादि सदृश वाक्यों का निराकरण करने के लिये "**रमणीय**" ऐसा कहा है। इसप्रकार "**स्वविशिष्टजनकतावच्छेदकार्थप्रतिपादकतासंसर्गेण चमत्कारवत्त्वमेव काव्यम्**"—यह काव्य लक्षण हुआ ।

काव्य को शब्दनिष्ठ मानने वालों का कहना है कि "**औत्पत्तिकस्तु शब्दस्यार्थेन सम्बन्धः**" इत्यादि मीमांसा सूत्र से शब्द और अर्थ का स्वाभाविक अविनाभाव सम्बन्ध के निश्चित हो जाने पर शब्दनिष्ठ काव्य को मानने से उसकी अर्थनिष्ठता स्वयं ही आ जाती है, फिर अर्थ का ग्रहण करना सर्वथा अनुचित ही है। अर्थशून्य शब्द में तो प्रयोग की योग्यता ही नहीं है, अतः काव्य को शब्दनिष्ठ ही समझना चाहिये ।

(ख) शब्द और अर्थ को आधार मानकर काव्य का लक्षण करने वाले आचार्यों के मत इसप्रकार हैं—

(१) साहित्यशास्त्र पर वैज्ञानिक रीति से लिखने वाले सर्वप्रथम आचार्य

भामह हैं। इन्होंने काव्य का लक्षण "**शब्दार्थौ सहितौ काव्यम्**" (काव्यालङ्कार १.१६) अर्थात् सामञ्जस्यपूर्ण शब्द और अर्थ को काव्य कहते हैं, किया है। इसप्रकार भामह ने शब्द और अर्थ में काव्यत्व का प्रतिपादन करके अपनी सूक्ष्म विवेचना शक्ति का परिचय दिया है।

(२) **रुद्रट** ने "**ननु शब्दार्थौ काव्यम्**" लक्षण कर भामह का ही अनुकरणमात्र किया है।

(३) **वामन** काव्यालङ्कारसूत्रवृत्ति (१.१.१-३) में कहते हैं कि–"**काव्यशब्दोऽयं गुणालङ्कारसंस्कृतयोः शब्दार्थयोः वर्तते**"—अर्थात् गुणों और अलङ्कारों से संस्कृत शब्द और अर्थ के लिये "**काव्य**" शब्द का प्रयोग होता है। इसी को स्पष्ट करते हुये आगे लिखा है—"**काव्यं ग्राह्यमलङ्कारात्**"—अर्थात् काव्य अलङ्कार के कारण ग्राह्य होता है और "**सौन्दर्यमलङ्कारः**"—अर्थात् अलङ्कार का अर्थ है सौन्दर्य। और काव्य में यह सौन्दर्य "**स दोषगुणालङ्कारहानादानाभ्याम्**" अर्थात् दोषों का त्याग और गुण तथा अलङ्कार के आदान से आता है। इसप्रकार वामन के अनुसार "**गुणों और अलङ्कारों से युक्त दोष से रहित शब्द और अर्थ का नाम "काव्य" है।**

(४) **वक्रोक्तिजीवितकार कुन्तक** ने काव्य का लक्षण किया है—

शब्दार्थौ सहितौ वक्रकविव्यापारशालिनि।
बन्धे व्यवस्थितौ काव्यं तद्विदाह्लादकारिणि ।। वक्रोक्तिजीवितम् १.७

अर्थात् काव्य मर्मज्ञों के आह्लादकारक सुन्दर (वक्र) कविव्यापार से युक्त रचना (बन्धे) में व्यवस्थित शब्द और अर्थ मिलकर काव्य कहलाते हैं अर्थात् "**शब्दार्थौ सहितौ काव्यम्**" यह काव्य लक्षण हुआ। कुन्तक के मत में "**तस्मान्न शब्दस्यैव रमणीयताविशिष्टस्य केवलस्य काव्यत्वं नात्यर्थस्येति**"—अर्थात् न केवल कवि कौशल से कल्पित सौन्दर्यातिशय वाले शब्द को ही काव्य कहा जा सकता है और नहीं रचना के वैचित्र्य से चमत्कारी अर्थ को ही काव्य कहा जा सकता है, अपितु शब्द और अर्थ दोनों ही मिलकर काव्य कहलाते हैं—"**तेन शब्दार्थौ द्वौ सम्मिलितौ काव्यमिति स्थितम्**"। इसीलिये कुन्तक ने अपने काव्य लक्षण में "**सहितौ**" पद को स्थान दिया है अर्थात् शब्द और अर्थ "**सहितौ**" = सहभाव से, साहित्य से अवस्थित ही काव्य कहलाते हैं। कुन्तक ने भामह की "**शब्दार्थौ सहितौ काव्यम्**" इस काव्य परिभाषा में वक्रोक्ति को सम्मिलित कर उसी रूप में स्वीकार कर लिया है। इसप्रकार कुन्तक के अनुसार काव्य उस कवि कौशलपूर्ण रचना को कहते हैं, जो अपने शब्द सौन्दर्य और अर्थ सौन्दर्य के अनिवार्य सामञ्जस्य के द्वारा काव्य मर्मज्ञों को आह्लाद देती है। वक्रोक्ति की व्याख्या करते हुये कुन्तक ने कहा है कि—"**वक्रोक्तिरेव वैदग्ध्य-भङ्गीभणितिरुच्यते**"। कुन्तक ने काव्य शब्द का प्रयोग शब्द तथा अर्थ इन दोनों के समन्वय के लिये किया है।

(५) काव्यप्रकाश के रचयिता **मम्मटाचार्य** ने '**तददोषौ शब्दार्थौ सगुणा-**

वनलंकृती पुनः क्वापि" काव्य का लक्षण किया है। अर्थात् च्युतसंस्कारादि दोषों से रहित, माधुर्य, ओज और प्रसाद नामक गुणों के सहित, तथा अलङ्कारों से युक्त और यदि कहीं स्फुट अलङ्कार नहीं है तब भी, शब्द और अर्थ काव्य कहलाते हैं। इसप्रकार काव्यप्रकाशकार के मत में भी "**शब्दार्थौ काव्यम्**" अर्थात् शब्द और अर्थ को काव्य माना गया है। काव्य के लक्षण में विद्यमान "**शब्दार्थौ**" में शब्द का पहले उल्लेख इसलिये किया गया है कि वह अर्थ का आश्रय होता है। इसीलिये "**नामरूपे व्याकरवाणि**" इस वैदिक प्रयोग में तथा "**वागर्थाविव सम्पृक्तौ**" इस लौकिक प्रयोग में शब्द का पहले उल्लेख किया गया है। उपर्युक्त लक्षण के अनुसार आचार्य मम्मट के मतानुसार (१) सरस किन्तु स्फुटालङ्कार सहित, (२) सरस किन्तु अस्फुटालङ्कार सहित, (३) नीरस स्फुटालङ्कार सहित और (४) नीरस अस्फुटालङ्कार सहित—ये चार काव्य के रूप में स्वीकार किये गये हैं। आचार्य मम्मट को अपने काव्य लक्षण की मूल प्रेरणा सम्भवतः वामन से प्राप्त हुई है। मम्मट के इस काव्य लक्षण की समालोचना तीन—आचार्य विश्वनाथ कविराज, पण्डितराज जगन्नाथ और जयदेव—ने की है। आचार्य विश्वनाथ कविराज ने उक्त लक्षण के **शब्दार्थौ** के तीनों विशेषणों **अदोषौ, सगुणौ** और **अनलंकृती पुनः क्वापि**–पर आपत्ति की है। पण्डितराज जगन्नाथ ने विशेष्य "**शब्दार्थौ**" पर तथा जयदेव ने "**अनलङ्कृती**" पर आपत्ति उठाई है।

(६) **वाग्भट्ट प्रथम ने**–"**साधुशब्दार्थसन्दर्भं गुणालङ्कारभूषितम्।**
स्फुटरीतिरसोपेतं काव्यं कुर्वीत कीर्तये॥"

काव्य लक्षण किया है। इनकी दृष्टि से गुण और अलङ्कारों से सुशोभित, राति ओर रस मे युक्त शब्दार्थ काव्य माना गथा है।

(७) **विद्याधर** ने एकावली में—"**शब्दार्थौ वपुरस्य शब्दार्थवपुस्तावत् काव्यम्**" कहकर शब्द और अर्थ को काव्य माना है।

(८) **विद्यानाथ** ने प्रतापरुद्री यशोभूषण में काव्य का लक्षण इसप्रकार किया है—

गुणालङ्कारसहितौ शब्दार्थौ दोषवर्जितौ।
गद्यपद्योभयं काव्यं काव्यविदो विदुः॥

अर्थात् गुण और अलङ्कारों से युक्त, दोष से रहित शब्द और अर्थ काव्य माने गये हैं।

(९) **अच्युतराय** ने साहित्यसार में काव्य का लक्षण—

तत्र निर्दोषशब्दार्थगुणवत्त्वे सति स्फुटम्।
गद्यादिबन्धरूपत्वकाव्यसामान्यलक्षणम्॥

किया है।

(१०) **धर्मसूरि** ने साहित्यरत्नाकर में "**सगुणालंकृती काव्यं पदार्थौ दोषवर्जितौ**"—काव्य लक्षण किया है।

(११) **क्षेमेन्द्र** कविकण्ठाभरण में "**काव्यं विशिष्टशब्दार्थसाहित्यसदलंकृति**"—काव्य का लक्षण करते हैं अर्थात् शब्दार्थगत सदलंकृत **काव्य** ही श्रेष्ठ है।

(१२) **न्यायवागीश** ने अलंकारचन्द्रिका में काव्य का यह लक्षण किया है—

गुणालङ्कारसंयुक्तौ शब्दार्थौ रसभावगौ।
नित्यदोषविनिर्मुक्तौ काव्यमित्यभिधीयते॥

अर्थात् गुण और अलंकार से युक्त, रस और भाव का अनुगमन करने वाले तथा नित्यदोषों से रहित शब्द और अर्थ **काव्य** कहलाते हैं।

(१३) **वाग्भट्ट द्वितीय** ने अपने काव्यानुशासन में—"**शब्दार्थौ निर्दोषौ सगुणौ प्रायः सालङ्कारौ काव्यम्**" काव्य का लक्षण किया है।

(१४) **समुद्रबन्ध** ने अलंकारसर्वस्य की टीका में इसप्रकार कहा है—

"**विशिष्टौ शब्दार्थौ काव्यम्**। तद्वैशिष्ट्यं धर्ममुखेन, व्यापारमुखेन, व्यंग्यमुखेनेति त्रयः पक्षाः इति। धर्मोऽपि द्विविधो नित्योऽनित्यश्च। अत्रानित्यधर्मोऽलंक्रियतेऽनेनेति करणव्युत्पत्त्या सिद्धोऽलंकारः। नित्यधर्मस्तु गुण एव। एवं व्यापारोऽपि द्विविधो वक्रोक्तिर्भाविकत्वं च। तदित्थं प्राधान्येन पञ्चरूपतया व्यवस्थितोऽयमालंकारिकसमयः"।

यहाँ पर भी शब्द और अर्थ को काव्य माना गया है।

(१६) **राजशेखर** (काव्यमीमांसा, ६ अध्याय) के अनुसार "**गुणवदलंकृतञ्च काव्यम्**" अर्थात् गुणयुक्त, अलंकारयुक्त और निर्दोष (चकारात् निर्दोष) वाक्य ही काव्य होता है।

(१७) **माघ** ने अपने महाकाव्य शिशुपालवधम् (११.८६) में "**शब्दार्थौ सत्कविरिव द्वयं विद्वानपेक्षते**" और **महाकवि कालिदास** ने अपने रघुवंश महाकाव्यम् (१.१) में "**वागर्थाविव संपृक्तौ**" कहकर "**शब्दार्थौ काव्यम्**" इस काव्यत्व की ओर ही संकेत किया है।

(१८) **आनन्दवर्धनाचार्य** ने अपने ध्वन्यालोक में एक स्थल पर काव्य के लक्षण की ओर इसप्रकार संकेत किया है—"**सहृदयहृदयाह्लादिशब्दार्थमयत्वमेव काव्यलक्षणम्**" अर्थात् जो शब्द और अर्थ सहृदयों के हृदयों को आह्लादित करते हैं, उनसे निर्मित होना ही काव्य का लक्षण है।

(१९) **विष्णुधर्मोत्तरपुराण** ने "**तदेव काव्यमित्युक्तमुपदेशैर्विना कृतम्**" ऐसा कहकर शास्त्र और इतिहास से काव्य को पृथक् कर दिया है।

(ग) काव्य के निम्न लक्षण रस और ध्वनि को आधार मानकर किये गये प्रतीत होते हैं—

(१) साहित्यदर्पणकार **आचार्य विश्वनाथ कविराज** ने रस को काव्य की आत्मा स्वीकार करते हुये "**काव्यं रसात्मकं काव्यम्**" अर्थात् रसात्मक वाक्य को

काव्य कहा है। डा० सत्यव्रतसिंह (साहित्यदर्पण--भूमिका हिन्दी व्याख्या) इस काव्य परिभाषा पर टिप्पणी करते हुये लिखते हैं कि इस परिभाषा में रहस्यमयी भावनायें छिपी हैं, कवियों के कला के रहस्य का संकेत छिपा है, सहृदयों की सहृदयता की कसौटी छिपी है और अन्त में विश्वनाथ कविराज की वह रहस्यमयी संवेदना छिपी है, जो बताना तो चाहती है कि काव्य क्या है किन्तु यह न बताकर कविता पर कविता करने लगती है। विश्वनाथ कविराज की काव्य परिभाषा के महत्व के रूप में जो बात दिखाई देती है वह यह है कि इसी परिभाषा के द्वारा **"रसात्मक वाक्य"** और **"रसात्मक महाकाव्य"** अथवा **"महाकाव्य की रसात्मक एकवाक्यता"** का सिद्धान्त सबसे पहिले प्रवर्तित हुआ। विश्वनाथ कविराज से पहिले के सभी आलंकारिक **"महाकाव्य प्रबन्ध"** की दृष्टि से काव्य लक्षण न कर "काव्य वाक्य" की दृष्टि से ही काव्य लक्षण किया करते थे।

"ननु तर्हि प्रबन्धान्तर्वतिनां केषाञ्चिन्नीरसानां पद्यानां काव्यत्वं न स्यादिति चेन्न। रसवत्पद्यान्तर्गतनीरसपदानामिव पद्यरसेन प्रबन्धरसेनैव तेषां रसवत्त्वाङ्गीकारात्"। (साहित्यदर्पण, प्रथमपरिच्छेद) इससे ऐसा प्रतीत होता है कि अन्य आलंकारिकों ने "मुक्तक" की दृष्टि से काव्य की परिभाषा की और विश्वनाथ कविराज ने "महाकाव्य प्रबन्ध" के आधार पर काव्य की परिभाषा की।

इसप्रकार विश्वनाथ कविराज की दृष्टि से "रस अर्थात् लोकोत्तर आनन्द जिस वाक्य में प्राप्त हो, उसी को काव्य कहते हैं। **'वाक्यम्"** के द्वारा कविता के कलापक्ष और **"रसात्मकम्"** के द्वारा भावपक्ष की समानता को स्वीकार करके कविता के दोनों ही पक्षों के अभेद को स्वीकार किया है।

(२) काव्यप्रकाशदीपिका में **श्री चण्डीदास** ने काव्य का लक्षण करते हुये **"आस्वादजीवातुः पदसन्दर्भः काव्यम्"** कहा है। इस लक्षण में यद्यपि शब्द को महत्व दिया गया है तथापि रस (आस्वाद) को काव्य का जीवन माना गया है।

(३) अलंकारशेखर में **शौद्धोदनि** ने **"काव्यं रसादिमद् वाक्यं श्रुतं सुख-विशेषकृत्"** काव्य का लक्षण किया है।

(४) **भोजराज** ने सरस्वतीकण्ठाभरण में—

निर्दोषं गुणवत्काव्यमलङ्कारैरलंकृतम्।
रसान्वितं कविः कुर्वन् कीर्तिं प्रीतिं च विन्दति॥

काव्य का लक्षण किया है। इनके अनुसार दोष का न होना, गुणों का होना, अलंकारों से अलंकृत और रसयुक्त काव्य होता है।

उपर्युक्त काव्य लक्षणों पर समीक्षात्मक दृष्टि डालने पर यह प्रतीत होता है कि साहित्यशास्त्र के प्रारम्भ में शब्द अथवा शब्दार्थ को आधार मानकर काव्य लक्षण किये जाते रहे। किन्तु आगे चलकर काव्य की आत्मा के रसरूप में निश्चित हो जाने पर शब्द और अर्थ को काव्य का शरीर माना जाने लगा।

———

६. पारिभाषिक शब्दविवेचन—

"**साहित्य क्या है**"? और "**काव्यलक्षण**" पर विवेचन करने के उपरान्त साहित्यशास्त्र के अन्दर प्रयुक्त होने वाले यत्किञ्चित् पारिभाषिक शब्दों पर विवेचन किया जा रहा है—

(१) **साहित्य**—"**सहितयोर्भावः साहित्यम्**"—अर्थात् सहित (शब्द और अर्थ) का भाव साहित्य कहलाता है। आचार्य कुन्तक के अनुसार साहित्य का अर्थ है—"**काव्य में प्रयुक्त शब्द और अर्थ के मध्य एक विशेष प्रकार के अलौलिक सौन्दर्य का सम्बन्ध**", शब्द और अर्थ का यह सम्बन्ध शाश्वत् है, "**सिद्धे शब्दार्थसम्बधे**" इति। शब्दकल्पद्रुम में श्लोकमयग्रन्थ को साहित्य कहा गया है। तद्यथा—

"मनुष्यकृतश्श्लोकमयग्रन्थविशेषः **साहित्यम्**" इति।

(२) **काव्य**—"**तस्य (कवेः) कर्मस्मृतं काव्यम्**" (राजशेखर) अर्थात् काव्य कवि की कृति या कर्म है। परिणामतः "**विशिष्टौ शब्दार्थौ काव्यम्**" अर्थात् विशिष्ट शब्द और अर्थ **काव्य** कहलाते हैं। आचार्य विश्वनाथ कविराज ने "**काव्य**" की परिभाषा इसप्रकार की है—

भाषाविभाषानियमात्काव्यं सर्गसमुज्झितम्।
एकार्थप्रवणैः पद्यैः सन्धिसामग्रचवर्जितम्॥ षष्ठपरिच्छेद, ३२८।

अर्थात् संस्कृत, प्राकृतादि भाषा और बाह्लीकादि विभाषा (विरुद्ध भाषा) के नियम से (अर्थात् संस्कृतभाषा से काव्य का निर्माण करने पर विभाषा का प्रयोग नहीं करना चाहिये और विभाषा निर्मित काव्य के अन्दर संस्कृतभाषा का प्रयोग नहीं करना चाहिये) रचित, सर्ग से रहित, एक अर्थ के प्रतिपादक पद्यों से बना हुआ, सन्धियों के समुदाय से रहित सरस वाक्य समूह **काव्य** होता है।

(३) **साहित्य और काव्य में अन्तर**—

साहित्य—एक सुन्दर शब्द और अर्थ का सम्बन्ध है और शब्द और अर्थ की सुन्दर अभिव्यक्ति **काव्य** है।

(४) **महाकाव्य**—'**सर्गबन्धो महाकाव्यम्**' (साहित्यदर्पण, षष्ठपरिच्छेद ३१५) अर्थात् जिसमें सर्गों का निबन्धन हो वह **महाकाव्य** होता है। ऋषिप्रणीत महाकाव्य में सर्ग का नाम **आख्यान** होता है। प्राकृत भाषाओं में निर्मित महाकाव्य में सर्ग का नाम "**आश्वास**" होता है और अपभ्रंश भाषा में निर्मित महाकाव्य में सर्ग का नाम "**कुडवक**" होता है।

(५) **महाकाव्य और काव्य में अन्तर**—महाकाव्य सर्गों में उपनिबद्ध होता है, जब कि **काव्य** सर्गों से रहित होता है। यह महाकाव्य की प्रणाली पर लिखा जाता है, पर इसमें महाकाव्य के सम्पूर्ण लक्षण घटित नहीं होते हैं।

(६) **खण्डकाव्य**—आचार्य विश्वनाथ ने इसका लक्षण इसप्रकार किया है—

"**खण्डकाव्यं भवेत्काव्यस्यैकदेशानुसारि च**" (षष्ठ परिच्छेद, ३२९)

अर्थात् महाकाव्य के एक अंश का अनुसरण करने वाला अर्थात् यत्किञ्चिल्लक्षणों से हीन, संस्कृत पद्यों से निर्मित "**खण्डकाव्य**" होता है। इसके अन्दर भाषा का नियम नहीं होता है। इसको इसप्रकार भी कहा जा सकता है कि इस खण्डकाव्य में जीवन के किसी एक अङ्ग का ही वर्णन किया जाता है और महाकाव्य की किसी घटना को लेकर ही काव्य का विषय बनाया जा सकता है। परन्तु यह घटना स्वत: अपने आप में पूर्ण होती है।

(७) **मुक्तककाव्य**—"**छन्दोबद्धपदं पद्यं तेन मुक्तेन मुक्तकम**"

(साहित्यदर्पण, षष्ठपरिच्छेद, ३१४)

अर्थात् छन्दोबद्ध पद वाले काव्य को "**पद्य**" कहते हैं। इस पद्य से मुक्त अर्थात् दूसरे पद्य से निरपेक्ष काव्य "**मुक्तक**" काव्य कहलाता है। अभिनवगुप्ताचार्य ने कहा है कि—

"**पूर्वापरनिरपेक्षया येन रसचर्वणा क्रियते तन्मुक्तम्**"।

अर्थात् पूर्वापर प्रसङ्ग से निरपेक्ष होने से जिससे रस की चर्वणा की जाती है, उसे "**मुक्तक**" काव्य कहते हैं। अग्निपुराण में कहा है—"**मुक्तकं श्लोक एवैकश्चमत्काराक्षमः सताम्**"—अर्थात् मुक्तक रचना उस श्लोक को (पद्य को) कहते हैं जो सहृदयों को अपना अर्थ व्यक्त करने में समर्थ हो। कहने का आशय यह है कि इस मुक्तक काव्य में प्रत्येक छन्दोबद्ध पद्य अपने आप में पूर्ण और स्वतन्त्र रूप से रस का उद्रेक करने में समर्थ होता है।

(८) **महाकाव्य, खण्डकाव्य और मुक्तककाव्य में अन्तर**

महाकाव्य के अन्दर जहाँ सम्पूर्ण जीवन की अनेकरूपता अभिव्यक्त होती है, **खण्डकाव्य** में जीवन के विविधरूपों में से किसी एक रूप की अभिव्यक्ति होती है, वहाँ **मुक्तककाव्य** में हृदय की कोई एक अनुभूति, कोई एक भाव अथवा कोई एक कल्पना अभिव्यक्त होती है।

(९) **गीतिकाव्य**—संगीतात्मक गेय मुक्तक **गीतिकाव्य** कहलाता है। इसमें रागात्मिका अनुभूति और आत्मीयता प्रधान होती है। **अथवा** भावावेश के साथ-साथ सङ्गीत तथा स्वर का सामञ्जस्य जिस काव्य में होता है, वह **गीतिकाव्य** कहलाता है।

(१०) **काव्य और सूक्ति में भेद**—काव्य में हृदय की कोमल वृत्तियों को रसाप्लावित करने की योग्यता होती है, जबकि सूक्ति में केवल चमत्कारपूर्ण कौतुक वृत्ति को तृप्त करने की सामर्थ्य होती है। भावाभिनिवेश काव्य है और उक्ति वैचित्र्य सूक्ति है। संस्कृत साहित्य की सूक्तियाँ अर्थान्तरन्यास अलङ्कार की देन हैं अर्थात् संस्कृत काव्यों में प्रयुक्त अर्थान्तरन्यास अलङ्कार सूक्ति ही है। सूक्तियों में शाश्वत् सत्य एवं तथ्यों का निर्देश रहता है।

(११) **काव्य और नाट्य**—भरतकृत नाट्यशास्त्र में काव्य और नाट्य

समानार्थक हैं—**काव्यं तावन्मुख्यतो दशरूपात्मकमेव**"·····**काव्यं च नाटयमेव च**"। आगे चलकर काव्य के श्रव्य और दृश्य दो भेद हो जाने पर नाटच की परिभाषा "**अवस्थानुकृतिर्नाटचम्**" हो गई अर्थात् काव्य में वर्णित धीरोदात्तादि अवस्थाओं का आङ्गिक, वाचिक, आहार्य और सात्विक इन चार प्रकार के अभिनय से तादात्म्य की अनुभूति **नाटच** कहलाता है। यह रसाश्रय होता है।

(१२) **नाटच, नृत्य और नृत्त में भेद**—

नाटच रसाश्रित होता है, नृत्य भावाश्रय होता है और नृत्त ताल और लय के आश्रित होता है।

(१३) **रस** "**आस्वाद्यत्वाद्रसः**" "**रस्यत इति रसः**"—अर्थात् आस्वादजन्य आनन्द रस होता है। भरतमुनि के अनुसार "**न रसाद् ऋते कश्चिदर्थः प्रवर्तते**"। "**रसो वै सः**"—वह परमेश्वर रसमय है।

(१४) **सहृदय**—अभिनवगुप्त के अनुसार—

"येषां काव्यानुशीलनाभ्यासवशाद् विशदीभूते मनोमुकुरे।
वर्णनीयतन्मयीभवनयोग्यता ते हृदयसंवादभाजः सहृदयाः॥

अर्थात् काव्य के अनुशीलन तथा अभ्यास से अर्थात् निरन्तर काव्य के अध्ययन और चिन्तन से जिनका अन्तःकरण नितान्त विशद हो जाता है और जिनकी वर्णनीय वस्तु के साथ तन्मय होने की योग्यता होती है, वे **सहृदय** कहलाते हैं। इस शब्द का व्युत्पत्तिलभ्य अर्थ है—"**कवि के हृदय के साथ सम्वाद अर्थात् साम्य, एकरूपता धारण करने वाला व्यक्ति**" (हृदयसंवादभाजः)।

अन्यत्र कहा गया है—

कवेरभिप्रायमशब्दगोचरं स्फुरन्तमार्द्रेषु परेषु केवलम्।
वदद्भिरङ्गैः स्फुटरोमविक्रयैर्जनस्य तूष्णीं भवतोऽयमञ्जलिः॥

अर्थात् कवि के व्यञ्जना घोषित गूढ़ अभिप्राय को समझकर जो शब्दों के द्वारा अपने हृदय के उल्लास की सूचना नहीं देता, अपितु रोमाञ्चित अङ्गों से ही जिसके हृदय की आनन्दानुभूति का ज्ञान होता है, वही सच्चा रसिक है, वही सहृदय है।

(१५) **वार्ता**—"**नामान्योन्यकथनम्**" अथवा "**वार्ता नाम कुशलप्रश्नपूर्विका संकथा**"।